जॉन के. जॉन

बनाम

टॉम वर्गीज और अन्य

12 अक्टूबर, 2007

[एस.बी.सिन्हा और हरजीत सिंह बेदी, न्यायाधिपतिगण]

परक्राम्य लिखत अधिनियम; धारा 138 और 139 तथा भारत का संविधान, 1950; अनुच्छेद 136:

चैकों का अनादरण- प्रत्यर्थीगण द्वारा कथित ऋण के निर्वहन में जारी किए गए चैक- नोटिस- प्रत्यर्थी द्वारा अदायगी का नहीं किया जाना- परिवाद पत्र- विचारण न्यायालय द्वारा यह पाया गया कि प्रत्यर्थी ने अधिनियम की धारा 138 के तहत दण्डनीय अपराध किया है तथा उसी अनुसार उसे सजा दी गई-प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई- उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा प्रत्यर्थी को दोषमुक्त करते हुए पलट दिया जाना- अपील पर अभिनिर्धारित किया: अधिनियम की धारा 139 के सन्दर्भ में उपधारणा खण्डनीय है- मौजूदा मामले में, उच्च न्यायालय द्वारा तथ्य का यह निष्कर्ष निकाला गया है कि प्रत्यर्थी द्वारा प्रश्नगत चैक किसी ऋण के निर्वहन में जारी नहीं किया गया है-परिवादी के आचरण पर ध्यान देते हुए, उच्च न्यायालय ने यह तथ्य साबित पाया

कि परिवादी इस न्यायालय में स्वच्छ हस्त से नहीं आया है- उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को विकृत नहीं माना जा सकता कि उच्चतम न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए उसमें कोई हस्तक्षेप करे।

संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत उच्चतम न्यायालय द्वारा विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग किया जाना- दोषमुक्त करने के निर्णय में हस्तक्षेप किया जाना- अधिनिर्धारित- आमतौर पर हस्तक्षेप नहीं किया जाता है।

प्रत्यर्थी ने कथित तौर पर अपीलार्थी के पक्ष में दो चैक जारी किए थे। जब यह चैक बैंक में प्रस्तुत किए गए तो अपर्याप्त निधि के अभाव में अनादरित कर दिए गए। यह अभिकथित किया गया कि नोटिस की तामील के उपरांत भी, प्रत्यर्थी ने अदायगी नहीं की, परिणामस्वरूप, उसके खिलाफ अपीलार्थी द्वारा दो परिवाद पत्र प्रस्तुत किए गए। अपीलार्थी ने, जो कि चिट्टियां संचालित करता था, यह भी अभिकथित किया कि इस तथ्य के बावजूद कि प्रत्यर्थी दो बेशकीमती चिट्टियों का चूक अभिदाता था, उसने उससे व्यक्तिगत ऋण लिया था। विचारण न्यायालय द्वारा इस आधार पर कार्यवाही की गई कि चूंकि स्वीकार्य रूप से प्रत्यर्थी द्वारा एेसे चैक जारी किए गए हैं, जो कि प्रस्तुत किए जाने पर अनादरित हो गए थे, प्रत्यर्थी ने परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत दण्डनीय अपराध किया

है। विचारण न्यायालय का निष्कर्ष अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा अपील में पुष्ट किया गया था। जबकि प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत की गई निगरानी में उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी यह साबित नहीं कर पाया है कि प्रत्यर्थी ने उससे वह धनराशि उधार ली थी, जिसके लिए चैक जारी किए गए थे। इसलिए वर्तमान अपील पेश हुई है।

अपीलार्थी ने यह तर्क दिया कि उच्च न्यायालय पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के तहत विचारण न्यायालय के तथा प्रथम अपील न्यायालय के निष्कर्ष पलटने में सही नहीं था, ऐसा कोई कारण नहीं था कि अधिनियम की धारा 139 के तहत अभियुक्त के विरूद्घ उपधारणा नहीं उठाई जाए क्योंकि स्वीकृत रूप से उसने चैक जारी किए थे, जो कि प्रस्तुत किए जाने पर अनादरित कर दिए गए थे।

न्यायालय ने अपीलों को खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया कि:-

अधिनियम की धारा 139 के संदर्भ में ली गई उपधारणा खंडन योग्य है। यदि, पक्षकारान द्वारा अभिलेख पर लाए गए सबूतों के विश्लेषण पर, तत्काल मामले में प्राप्त होने वाली तथ्यात्मक स्थिति में, उच्च न्यायालय द्वारा इस तथ्य का निष्कर्ष निकाला गया है कि चैक किसी ऋण के निर्वहन में प्रत्यर्थी द्वारा जारी नहीं किए गए थे, हमारी राय में, उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को अनुच्छेद 136 के तहत हमारे विवेकाधीन क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हमारे द्वारा विकृत नहीं कहा जा सकता है। उच्च

न्यायालय पक्षकारान के आचरण पर ध्यान देने का हकदार था। उच्च न्यायालय ने यह पाया है कि शिकायतकर्ता ने साफ हाथों से अदालत का दरवाजा नहीं खटखटाया। उनका आचरण किसी विवेकशील व्यक्ति का नहीं था। किसी दस्तावेज का निष्पादन क्यों नहीं किया गया, जबकि प्रत्यर्थी को कथित तौर पर बड़ी धनराशि का भुगतान किया गया था, यह एक सुसंगत प्रश्न है जिसे इस मामले में उठाया जा सकता है। इसमें उच्च न्यायालय अपना निष्कर्ष निकालने के लिए स्वतंत्र था। न केवल कोई दस्तावेज निष्पादित नहीं किया गया था, यहां तक कि कोई ब्याज भी नहीं लिया गया था। यह राय बनाना विसंगत होगा कि यह जानने के बावजूद कि प्रत्यर्थी बेशकीमती राशि के संबंध में किश्तों का भुगतान करने के लिए अपने भार का निर्वहन करने की स्थिति में भी नहीं था, उसे अग्रिम राशि दी जाएगी और वह भी तीन सिविल वादों के प्रस्तुत होने के बाद भी उधार दी गई राशि पर कोई ब्याज भी नहीं लिया गया। यदि इस प्रकृति की स्थिति में, उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि प्रत्यर्थी ने उसके उपर डाले गए सबूत के भार का निर्वहन कर दिया है, अधिनियम की धारा 139 के तहत इसका कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता। [पैरा 10]

अब यह विधि का एक सुस्थापित सिद्घान्त है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए

यह न्यायालय आमतौर पर दोषमुक्त करने के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करेगा, यदि दो दृष्टिकोण संभव है। [पैरा 11]

एम.एस.नारायण मेनन उपनाम मणि बनाम केरल राज्य व अन्य, [2006] 6 एस.सी.सी.39 और महादेव लक्ष्मण सरने व अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य (2007) 7 स्केल 137, पर निर्भर किया गया।

आपराधिक अपील न्याय निर्णय: आपराधिक अपील संख्या 1433-34/2007 केरल उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम की क्रिमिनल आर.पी. संख्या 2255 व 2256/2004 (बी) में पारित अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 24.08.2005 के विरूद्घ

अपीलार्थी की ओर से बी.वी.दीपक, अजय के.जैन और एम.पी.विनोद।

प्रत्यर्थीगण की ओर से आर.सतीश, एम.टी.जाॅर्ज और पी.एस.सुधीर।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति एस.बी.सिन्हा द्वारा पारित किया गया।

1. अनुमति दी जाती है।

2. परिवादी हमारे समक्ष केरल उच्च न्यायालय की विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा वर्ष 2004 की आपराधिक निगरानी याचिका संख्याक 2255 व 2256 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 24.08.2005 से

व्यथित और असंतुष्ट होकर उपस्थित हुआ है, जिसके द्वारा और जिसके तहत विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा पारित दोषसिद्धि व दण्डादेश के निर्णय को अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्ट किया गया था, रद्द कर दिया गया था।

3. प्रत्यर्थी ने कथित तौर पर मौजूदा अपीलार्थी के पक्ष में दो चैक जारी किए थे। जब उक्त चैक प्रस्तुत किए गए तो अपर्याप्त धनराशि के अभाव में अनादरित कर दिए गए गए। चूंकि नोटिस की तामील के बावजूद, प्रत्यर्थी ने कोई भुगतान नहीं किया, उसके खिलाफ दो परिवाद पत्र दायर किए गए।

4. विद्वान विचारण न्यायाधीश के समक्ष और परिणामस्वरूप अपील न्यायालय के साथ साथ पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष जो प्रश्न उठा, वह यह था कि क्या उक्त चैक किसी मौजूदा ऋण के निर्वहन के लिए जारी किए गए थे ?

5. पक्षकारान के मध्य संबंध विवाद में नहीं है। परिवादी चिट्टियां चलाता था। प्रत्यर्थी अपीलार्थी द्वारा संचालित तीन चिट्टियों का अनुमोदनकर्ता था। चिट्टियों में से एक के संबंध में दिनांक 07.10.1997 को एक लाख रूपये की राशि की बोली लगायी गयी थी। राशि का भुगतान दिनांक 03.11.1997 को किया गया था। प्रत्यर्थी द्वारा दिनांक 07.04.1998 को एक लाख रूपये की राशि के लिए एक और चिट्टी के

संबंध में फिर से बोली लगायी गयी थी। इस राशि का भुगतान दिनांक 25.06.1998 को किया गया था। कथित तौर पर, प्रत्यर्थी ने दिनांक 07.04.1998 से देय किश्तों के भुगतान में चूक की थी।

निर्विवाद रूप से, उक्त राशि की वसूली के लिए अपीलार्थी द्वारा कोट्टायम की अधीनस्थ न्यायालय की अदालत में प्रत्यर्थी के खिलाफ एक मुकदमा ओ.एस. संख्या 1/2000 दर्ज किया गया। एक अन्य मुकदमा ओ.एस.संख्या 168/2000 मुंसिफ न्यायालय चांगनचेरी के यहां 55,900/- रूपये की राशि मांग करते हुए पेश किया गया था। प्रत्यर्थी, उपरोक्त दो चिट्टियों के अलावा पचास हजार रूपये की एक अन्य चिट्टी का भी अनुमोदनकर्ता था। इसे प्रत्यर्थी द्वारा महत्व नहीं दिया गया था। यह आरोप लगाते हुए कि प्रत्यर्थी ने तीन अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर उससे दिनांक 26.03.1998 को एक लाख रूपये उधार लिए थे, जिसके लिए उसने एक प्रोनोट निष्पादित किया था तथा मांग के बावजूद भी, उक्त राशि का भुगतान उसे नहीं किया गया, अपीलार्थी ने अधीनस्थ न्यायालय कोट्टायम में एक और वाद आे.एस.संख्या 362/1999 एक लाख रूपये की राशि ब्याज सहित वसूल करने हेतु दायर किया था।

6. स्वीकृत रूप से मौजूदा अपीलार्थी 'करप्पारा चिट्टी फंड्स' नामक एक फर्म के नाम पर चिट्टी का संव्यवहार कर रहा था। वह उक्त फर्म का भागीदार है। उक्त फर्म का प्रतिनिधित्व करते हुए उसने उक्त मुकदमे

दायर किए थे। अपीलार्थी ने तर्क दिया कि इस तथ्य के बावजूद कि प्रतिवादी दो बेशकीमती चिट्ठियों का डिफाॅल्ट अनुमोदनकर्ता था, उसने अपनी व्यक्तिगत क्षमता में उससे व्यक्तिगत ऋण लिया।

7. विद्वान विचारण न्यायाधीश के समक्ष, प्रत्यर्थी ने दो गवाहों के बयान लेखबद्घ कराए थे, जिन्होंने उपरोक्त तथ्य को साबित किया। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अपने निर्णय में, पक्षकारान के द्वारा और उनके मध्य लंबित सिविल मुकदमों की लंबितता पर ध्यान दिया। हालाँकि, यह इस आधार पर आगे बढ़ा कि चूंकि प्रत्यर्थी द्वारा चैक जारी किए गए थे, जिन्हें प्रस्तुत करने पर भुगतान नहीं किया गया था, उसने परक्राम्य लिखत अधिनियम (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 138 के तहत दण्डनीय अपराध किया है। विद्वान विचारण न्यायाधीश के उक्त निष्कर्ष को श्री के.रामकृष्णन, विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा दिनांक 17.03.2004 के निर्णय और आदेश द्वारा अपील में पुष्ट रखा गया था।

8. उच्च न्यायालय ने हालाँकि, प्रत्यर्थी द्वारा दायर पुनरीक्षण आवेदन में यह राय दी कि स्वीकृत एवं प्रमाणित तथ्य प्रत्यर्थी व डीडब्ल्यू 1 और 2 के संस्करणों को मजबूती प्रदान करते हैं या कम से कम इन्हें संभावित बनाते हैं, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा एवं अपील न्यायालय द्वारा उनकी साक्ष्य को तिरस्कृत नहीं करना चाहिए था। यह मानते हुए कि प्रत्यर्थी ने अधिनियम की धारा 139 के तहत उत्पन्न होने वाली

उपधारणा का सफलतापूर्वक खंडन किया है, यह अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलार्थी यह साबित करने में सफल नहीं हुआ कि प्रत्यर्थी ने कोई राशि उधार ली थी, जिसके लिए उक्त चैक जारी किए गए थे।

9. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री बी.वी.दीपक ने तर्क प्रस्तुत किया है कि उच्च न्यायालय अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में विद्वान विचारण न्यायाधीश और अपील न्यायालय के निष्कर्षों को उलटने में सही नहीं था। विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि ऐसा कोई कारण नहीं था कि अधिनियम की धारा 139 के संदर्भ में आरोपी के खिलाफ कोई उपधारणा क्यों नहीं ली जा सकती थी क्योंकि स्वीकृत रूप से उसके द्वारा चैक जारी किए गए थे, जो प्रस्तुत करने पर अनादरित हो गए थे।

10. पक्षकारान के बीच संबंध विवाद में नहीं है। परिवादी एक फर्म का भागीदार है जो चिट्टी फंड चलाने का व्यवसाय करती है। यह तथ्य विवादित नहीं है कि प्रत्यर्थी ने तीन चिट्टियों की सदस्यता ली और वह बेशकीमती राशि की किश्तों का भुगतान नहीं कर सका। प्रत्यर्थी के खिलाफ अपीलार्थी के माध्यम से फर्म द्वारा दायर तीन सिविल मुकदमों का लंबित होना भी विवाद में नहीं है। पक्षकारान द्वारा अभिलेख पर लाई गई सामग्रियों का विश्लेषण करने पर उच्च न्यायालय तथ्यों संबंधी इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि पक्षकारान के आचरण को देखते हुए यह मानना

विवेकपूर्ण नहीं होगा कि इसके बावजूद कि अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी के विरूद्घ वाद प्रस्तुत किए गए हैं, प्रार्थी प्रत्यर्थी ने बड़ी राशि उधार ली थी। अधिनियम की धारा 139 के संदर्भ में ली गई उपधारणा खंडन योग्य है। यदि, पक्षकारान द्वारा अभिलेख पर लाए गए सबूतों के विश्लेषण पर, तत्काल मामले में प्राप्त होने वाली तथ्यात्मक स्थिति में, उच्च न्यायालय द्वारा इस तथ्य का निष्कर्ष निकाला गया है कि चैक किसी ऋण के निर्वहन में प्रत्यर्थी द्वारा जारी नहीं किए गए थे, हमारी राय में, उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को अनुच्छेद 136 के तहत हमारे विवेकाधीन क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हमारे द्वारा विकृत नहीं कहा जा सकता है। उच्च न्यायालय पक्षकारान के आचरण पर ध्यान देने का हकदार था। उच्च न्यायालय ने यह पाया है कि परिवादी ने साफ हाथों से अदालत का दरवाजा नहीं खटखटाया। उनका आचरण किसी विवेकशील व्यक्ति का नहीं था। किसी दस्तावेज का निष्पादन क्यों नहीं किया गया, जबकि प्रत्यर्थी को कथित तौर पर बड़ी धनराशि का भुगतान किया गया था, यह एक सुसंगत प्रश्न है जिसे इस मामले में उठाया जा सकता है। इसमें उच्च न्यायालय अपना निष्कर्ष निकालने के लिए स्वतंत्र था। न केवल कोई दस्तावेज निष्पादित नहीं किया गया था, यहां तक कि कोई ब्याज भी नहीं लिया गया था। यह राय बनाना असंगत होगा कि यह जानने के बावजूद कि प्रत्यर्थी बेशकीमती राशि के संबंध में किश्तों का भुगतान करने के लिए अपने भार का निर्वहन करने की स्थिति में भी नहीं है, उसे अग्रिम राशि

दी जाएगी और वह भी तीन सिविल वादों के प्रस्तुत होने के बाद भी उधार दी गई राशि पर कोई ब्याज भी नहीं लिया गया। यदि इस प्रकृति की स्थिति में, उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि प्रत्यर्थी ने उसके उपर डाले गए साक्ष्य के भार का निर्वहन कर दिया है, अधिनियम की धारा 139 के तहत इसका कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता।

11. अब यह विधि का एक सुस्थापित सिद्घान्त है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए यह न्यायालय आमतौर पर दोषमुक्त करने के फैसले में हस्तक्षेप नहीं करेगा, यदि दो दृष्टिकोण संभव है।

एमएस नारायण मेनन उर्फ मणि बनाम केरल राज्य व अन्य [(2006) 6 एससीसी 39] में, इस न्यायालय ने कहाः

> "54. किसी भी स्थिति में उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के खिलाफ अपील मानकर एक अपील पर विचार किया, यह वास्तव में पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग था। दोषमुक्त करने के निर्णय के खिलाफ अपीलीय शक्ति का प्रयोग करते समय भी, उच्च न्यायालय को विधि के सुस्थापित सिद्घांतों को ध्यान में रखना चाहिए था कि जहां दो दृष्टिकोण संभव है, अपीलीय न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषमुक्त करने के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं

करना चाहिए। [महादेव लक्ष्मण सारणे व अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2007(7) स्केल 137 को भी देखें]"

12. उपरोक्त कारणों से, इन अपीलों में कोई सार नहीं है, जिन्हें तदनुसार खारिज किया जाता है।

अपीलें खारिज की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी राजेन्द्र कुमार (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।